पीयर-रिव्यूड जर्नल
जर्नल वेबसाइटः
https://anubodhan.org

अनुबोधन, खण्ड 2, अंक 3, जुलाई–सितम्बर 2026, पृष्ठ 44–53
ISSN: 3049-4184 (प्रिन्ट) 3108-1185 (ऑनलाइन)
https://doi.org/10.65885/anubodhan.v2n3.2026.097

उत्तराखण्ड में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता: उद्भव, विकास एवं सामाजिक परिवर्तन

नीलम दानू [1] · प्रो० रेनू प्रकाश [2]

प्राप्तिः 28 जुलाई 2026 / स्वीकृतः 4 अगस्त 2026 / प्रकाशित ऑनलाइन: 18 अगस्त 2026
Copyright © 2026 Author(s). Published by Siri Research Foundation. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution International License (CC BY 4.0).

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उदेश्य उत्तराखण्ड की भौगोलिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों के संदर्भ में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता के ऐतिहासिक उद्भव, क्रमिक विकास और वर्तमान स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। पर्वतीय समाज पारंपरिक रूप से पितृसत्तात्मक एवं रूढ़िवादी मान्यताओं से प्रभावित रहा है, इस व्यवस्था में महिलायें घरेलू उत्तरदायित्वों और कठिन शारीरिक श्रम तक ही सीमित रहीं हैं। कालांतर में औपनिवेशिक काल के दौरान राष्ट्रीय चेतना के विकास के साथ-साथ उत्तराखण्ड में महिला चेतना एवं राजनीतिक सहभागिता का उद्भव हुआ। औपनिवेशिक काल से पूर्व उत्तराखण्ड की महिलाओं की राजनीतिक स्थिति अत्यंत सीमित थी। अतः प्रस्तुत शोध पत्र में महिलाओं के राजनीतिक सहभागिता के विकास को तीन प्रमुख चरणों में विभाजित किया गया है। प्रथम चरण स्वतंत्रता आंदोलन के साथ आरम्भ हुआ जिसमें अनेक महिलाओं ने सक्रिय भाग लिया तथा ब्रिटिश साम्राज्यवाद का सामना किया। द्वितीय चरण में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात महत्वपूर्ण जन आंदोलनों का दौर आया जिनमें यहाँ की महिलाओं ने सक्रिय एवं व्यापक भागीदारी की, इनमें कुछ आंदोलन जैसे 'चिपको' आंदोलन तथा उत्तराखण्ड राज्य आन्दोलन विशेष रूप से महत्वपूर्ण रहे। तृतीय चरण राज्य गठन के बाद महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण तथा संस्थागत विकास का अध्ययन करता है। इस चरण में उत्तराखण्ड सरकार ने 2008 में पंचायती राज व्यवस्था के अंतर्गत महिलाओं को 50% आरक्षण का प्रावधान किया जिसके परिणाम स्वरूप राजनीति में महिलाओं की भागीदारी में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। हालाँकि, प्रस्तुत शोध पत्र यह भी रेखांकित करता है कि महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी के समक्ष अनेक व्यावहारिक चुनौतियाँ अभी भी हैं।

मुख्य शब्द: उत्तराखण्ड, राजनीतिक सहभागिता, महिला नेतृत्व, महिला आरक्षण, पंचायती राज व्यवस्था, सामाजिक परिवर्तन।

[1] शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड

✉ नीलम दानू, E-mail: danu3neelam@gmail.com

[2] प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड

प्रस्तावना

उत्तराखण्ड एक कठोर व जटिल भौगोलिक संरचना वाला प्रदेश है। यहाँ का जीवन कठोर प्राकृतिक परिस्थितियों और सीमित संसाधनों पर आधारित है, इसीलिए पर्वतीय समाज की व्यवस्था सामुदायिक सहयोग तथा परंपराओं पर आधारित है। उत्तराखण्ड की सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना से संबंधित अध्ययन बताते हैं कि यहाँ के समाज में पारंपरिक संस्तरणात्मक विभाजन है, जो जाति व्यवस्था पर आधारित है तथा असमानता के मूल्यों को धारण किए हुए है।[1] जबकि सांस्कृतिक दृष्टि से उत्तराखण्ड एक समृद्ध प्रदेश है। यहाँ के लोग परिश्रमी, ईमानदार, स्वाभिमानी और सरल स्वभाव के होते हैं।[2] त्यौहार, मेले, संक्रांतियाँ, पारंपरिक लोक नृत्य जैसे झोड़, चाँचरी, छोलिया, तथा मंगल गीत यहाँ की समृद्ध संस्कृति को दर्शाते हैं।[3]

उत्तराखण्ड में विषम भौगोलिक परिस्थितियों के चलते पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका के संसाधनों का अभाव रहा है, इस कारण पुरुषों का मैदानी क्षेत्रों में व्यापक पलायन होता रहा है।[4] पुरुषों का पलायन और प्रवास के कारण परिवार के देखभाल और घरेलू जिम्मेदारियों का पूरा भार महिलाओं पर आ गया। इन्ही परिस्थितियों के चलते पर्वतीय सामाजिक व्यवस्था में महिलायें परिवार की धुरी बन गयी। यहाँ महिलायें सुबह के तीसरे पहर से देर रात तक कठिन शारीरिक श्रम करती हैं। कृषि और पशुपालन पूरी तरीके से इन्हीं निर्भर है।[5] इस प्रकार महिलायें पहाड़ी जीवन और अर्थव्यवस्था की सुदृढ़ रीढ़ बनी हुई हैं। किन्तु समाज में एक सुदृढ़ स्थिति होने के बाद भी वे सामाजिक वंचना तथा असमानता का सामना करती हैं, साथ ही रूढ़िवादी मान्यताएं तथा पितृसत्तात्मक भेदभाव भी जीवन का हिस्सा हैं।

वर्तमान में भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था है तथा एक लोकतान्त्रिक व्यवस्था तभी सफल मानी जाती है जब नागरिकों की अधिकतम राजनीतिक सहभागिता हो। जन-सहभागिता जितनी अधिक होगी, लोकतंत्र भी उतना ही मजबूत होगा। महिलाएँ देश की आबादी का आधा हिस्सा हैं, वे समाज के संचालन के लिए पुरुषों के समान ही महत्व रखती हैं अतः सफल लोकतंत्र के लिए महिलाओं की भागीदारी भी अत्यंत आवश्यक है। साथ ही, महिलाओं के लिए राजनीतिक भागीदारी इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि जब महिलायें सार्वजनिक नीतियों के निरूपण और क्रियान्वयन की प्रक्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग लेती हैं तो उनके भीतर चेतना और आत्मनिर्भरता का विकास होता है। वे केवल अपने हितों की रक्षा नहीं करती बल्कि समाज में नैतिकता और राजनीतिक सजगता को भी बढ़ावा देती हैं। अध्ययन बताते हैं कि जहां महिलायें राजनीति और पंचायती राज व्यवस्था में आगे आती हैं, वहाँ नागरिक समाज का उन्नयन होता है, खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण सुरक्षा और आर्थिक आजीविका जैसे मुद्दों पर संवेदनशील नीतियां बनती हैं और प्रशासनिक स्तर पर भ्रष्टाचार में कमी आती है।[6] अतः महिलाओं की राजनीतिक जागरूकता सामाजिक परिवर्तन एवं विकास को सुदृढ़ बनाती है।

महिलाओं की राजनीतिक जागरूकता तथा राजनीतिक भागीदारी सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन लाती है। सामाजिक परिवर्तन विकास की एक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से समाज की संरचना, मान्यताओं, मूल्यों, व्यवहारों तथा सामाजिक व्यवस्थाओं में समयानुकूल परिवर्तन आता है। यह परिवर्तन समाज को समतापूर्ण और प्रगतिशील बनाता है। इसका मुख्य उदेश्य समाज में असमानता, भेदभाव, रूढ़ियाँ व अन्याय आदि को कम करना है। इस प्रक्रिया में महिला नेतृत्व की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि महिलायें समाज की आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करती हैं और उनके सक्रिय योगदान के बिना सामाजिक परिवर्तन संभव नहीं है। उत्तराखण्ड के संदर्भ में महिला नेतृत्व सामाजिक परिवर्तन का एक प्रभावशाली माध्यम बनकर उभरा है। महिलाएँ समाज के विभिन्न क्षेत्रों में आगे बढ़कर नेतृत्व कर रही हैं। पंचायतों में महिलाओं को आरक्षण मिलने के बाद ग्रामीण स्तर पर महिलाओं की भागीदारी में और अधिक वृद्धि हुई है इससे महिलाओं को अपने मुद्दे उठाने का अवसर मिला है।

साहित्य समीक्षा

महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता तथा नेतृत्व द्वारा हुए सामाजिक परिवर्तन से संबंधित उपलब्ध साहित्य यह स्पष्ट करता है कि महिलाओं में राजनीतिक चेतना का विकास केवल संवैधानिक अधिकारों या राजनीतिक प्रतिनिधित्व का

परिणाम नहीं है, बल्कि यह श्रम प्रधान जीवन-शैली, सामाजिक आंदोलनों, और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं से विकसित हुआ है। विभिन्न विद्वानों ने इस विषय का अध्ययन अलग-अलग दृष्टिकोणों से किया है।

सुशीला कौशिक (1993) ने '*Women's Participation in Politics'*, में यह उल्लेख किया है कि लोकतंत्र की सफलता के लिए महिलाओं की भागीदारी अनिवार्य है। उनके अनुसार महिलाओं की सहभागिता केवल मतदान तक सीमित नहीं है, बल्कि नीति-निर्माण की प्रक्रियाओं में उनकी सक्रिय भूमिका लोकतंत्र को अधिक समावेशी और उत्तरदायी बनाती है।

राधा कुमार (1993) ने '*The History of Doing'*, में भारतीय महिला आंदोलनों के ऐतिहासिक विकास का विश्लेषण करते हुए बताया है कि विभिन्न सामाजिक आंदोलनों के माध्यम से महिलाओं की सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना का विकास हुआ, इनके अनुसार महिला आंदोलनों ने लैंगिक समानता, सामाजिक न्याय और राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

निर्मला बुच (2000) ने '*Women's Experience in New Panchayats: The Emerging Leadership of Rural Women'*, में पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के अनुभवों का अध्ययन करते हुए निष्कर्ष निकाला कि वास्तविक सशक्तिकरण के लिए केवल आरक्षण ही काफी नहीं है क्योंकि यह महिलाओं को राजनीतिक मंच तो प्रदान करता है, किन्तु वास्तविक सशक्तिकरण के लिए शिक्षा, प्रशिक्षण और स्वतंत्र निर्णय क्षमता का विकास भी आवश्यक है।

जॉर्ज मैथ्यू (2000) ने पंचायती राज संस्थाओं में आरक्षण के प्रभाव का अध्ययन करते हुए बताया कि ग्रामीण महिलाओं को राजनीतिक प्रक्रिया में प्रवेश का अवसर 73 वें संविधान संशोधन ने प्रदान किया तथा स्थानीय लोकतंत्र को अधिक सहभागी बनाया।

रामचंद्र गुहा (2000) ने '*The Unquiet Woods: Ecological Change and Peasant Resistance in the Himalaya'*, में चिपको आंदोलन को पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ महिला नेतृत्व और जनसहभागिता का महत्वपूर्ण माध्यम माना है।

रेनू प्रकाश (2001) ने '*कार्यरत महिलायें: सापेक्ष अभावबोध, भूमिका, संघर्ष एवं शोषण'*, में नगरीय कुमाऊँ की कार्यरत महिलाओं के संदर्भ में भूमिका-संघर्ष, सापेक्ष अभावबोध तथा शोषण का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत किया। यह अध्ययन बताता है कि महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक भूमिकाओं के विस्तार के साथ-साथ उनकी निर्णय क्षमता तथा सार्वजनिक जीवन में सहभागिता भी बढ़ती है।

वाई. एस. धस्माना (2005) ने '*उत्तराखण्ड आंदोलन का इतिहास'*, में स्पष्ट किया कि उत्तराखण्ड राज्य आंदोलन केवल क्षेत्रीय अस्मिता का संघर्ष नहीं था, बल्कि सामाजिक न्याय, विकास और लोकतांत्रिक अधिकारों की मांग से भी जुड़ा हुआ था। इस आंदोलन में महिलाओं ने व्यापक भागीदारी की तथा महिला नेतृत्व को एक नई पहचान प्रदान की।

फ्रांसिस सिन्हा (2009) ने स्वयं सहायता समूहों (SHGs) की भूमिका का अध्ययन करते हुए पाया कि इन समूहों ने महिलाओं में नेतृत्व क्षमता, आर्थिक आत्मनिर्भरता तथा सामुदायिक सहभागिता को बढ़ावा दिया, जिससे उनकी राजनीतिक भागीदारी में भी वृद्धि हुई।

प्रवीण राय (2011) ने महिलाओं की चुनावी भागीदारी का विश्लेषण करते हुए *'Silent Feminisation of Politics'*, की अवधारणा प्रस्तुत की। उन्होंने बताया कि महिलाओं की राजनीतिक चेतना बढ़ रही है, किन्तु प्रतिनिधित्व और टिकट वितरण के स्तर पर अभी भी लैंगिक असमानता बनी हुई है। इन्होंने अपने पूर्व निष्कर्षों को आगे बढ़ाते हुए महिलाओं की चुनावी भागीदारी में वृद्धि और राजनीतिक संरचनाओं में विद्यमान लैंगिक असमानताओं का विश्लेषण किया।

राजेंद्र पी. ममगाईं एवं डी. एन. रेड्डी (2017) ने उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में पुरुष पलायन के प्रभावों का अध्ययन किया तथा यह बताया कि इससे महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक जिम्मेदारियाँ बढ़ीं तथा वे स्थानीय नेतृत्व और निर्णय-निर्माण प्रक्रिया में अधिक सक्रिय हुईं।

गीता तिवारी (2018) ने पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी का विश्लेषण किया तथा पाया कि आरक्षण के बावजूद "प्रॉक्सी राजनीति" या "प्रधान पति" की प्रवृत्ति वर्तमान में भी विद्यमान है। उन्होंने महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण हेतु प्रशिक्षण और प्रशासनिक क्षमता के विकास की आवश्यकता पर बल दिया।

राजकुमारी भंडारी चौहान (2019) ने *"महिला आंदोलनों का इतिहास: पर्वतीय राज्य उत्तराखण्ड" के विशेष संदर्भ में*, में स्वतंत्रता आंदोलन, चिपको आंदोलन, मद्य निषेध आंदोलन तथा उत्तराखण्ड राज्य आंदोलन में महिलाओं की भूमिका का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया। उनके अनुसार महिलाओं ने राजनीतिक चेतना और संगठनात्मक क्षमता का परिचय देते हुए सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

शेखर पाठक (2020) ने '*Chipko Movement: A People's History'*, में चिपको आंदोलन को उत्तराखण्ड की महिलाओं के नेतृत्व, संघर्षशीलता और सामाजिक चेतना का प्रतीक बताया है।

प्रियंका पाण्डेय (2024) ने '*Status of Women in Uttarakhand'*, में उत्तराखण्ड की महिलाओं की सामाजिक स्थिति का विश्लेषण करते हुए बताया कि पर्वतीय महिलायें अत्यधिक श्रम के लिए विवश हैं तथा श्रम करने के बावजूद महिलाएँ सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक अवसरों से अपेक्षाकृत वंचित रही हैं। उन्होंने महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए शिक्षा और राजनीतिक जागरूकता को आवश्यक माना।

अमर उजाला (2025) में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार उत्तराखण्ड पंचायत चुनाव 2025 में कुल प्रत्याशियों में लगभग 59 प्रतिशत महिलाएँ थीं। यह आँकड़ा दर्शाता है कि महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी अब केवल आरक्षण तक सीमित नहीं रही, बल्कि वे सामान्य राजनीतिक प्रतिस्पर्धा में भी सक्रिय रूप से भाग लेने लगी हैं।

महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता के उद्भव एवं विकास का प्रथम चरण

उत्तराखण्ड में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता का उद्भव तथा विकास का प्रथम चरण स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान प्रारम्भ हुआ,[7] इस दौरान पर्वतीय समाज की महिलायें पहली बार संगठित रूप से राजनीतिक गतिविधियों से जुड़ी। इससे पूर्व महिलाओं की राजनीतिक भूमिका सामान्यतः अत्यंत सीमित थी यहाँ तक कि कुलीन तथा राजपरिवार की महिलाओं को भी सामान्य परिस्थितियों में शासन संचालन का प्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं था। हालाँकि विशेष परिस्थितियों जैसे अल्पवयस्क उत्तराधिकारी, राज्य में संकट की स्थिति होने अथवा बाह्य आक्रमण के दौरान राजपरिवार की महिलाओं ने शासन, उत्तराधिकार एवं राज्य की सुरक्षा से संबंधित विषयों में प्रभावशाली भूमिका निभाई। गढ़वाल की रानी कर्णावती, कुमाऊँ की जिया रानी तथा वीरांगना तीलू रौतेली इसके उल्लेखनीय उदाहरण हैं जिन्होंने संकट काल में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिकाओं का निर्वहन किया।[8] उस कल में सामान्य महिलाओं की राजनीतिक स्थिति राजनीतिक अधिकारों की दृष्टि से अत्यंत सीमित थी। महिलाओं का जीवन पारंपरिक रूप से रूढ़िवादी, जातिवादी और पुरुष प्रधान समाज समाज के अधीन था। महिलायें कठिन घरेलू उतरदायित्व तथा सामाजिक कुप्रथाएं जैसे बालविवाह, बहुविवाह, विधवा विवाह निषेध, देवदासी प्रथा आदि से पीड़ित थीं ।[9] समय के साथ महिलाओं ने इन सामाजिक कुप्रथाओं तथा बंधनों को सफलता पूर्वक चुनौती दी। 1930 के नमक सत्याग्रह और पेशावर कांड में गढ़वाल राइफल्स के सैनिकों के विद्रोह के बाद गढ़वाल और कुमाऊँ क्षेत्रों में राष्ट्रीय चेतना का प्रसार हुआ।[10] 5 मई 1930 को अल्मोड़ा के नंदा देवी मंदिर के प्रांगण में ब्रिटिश सरकार विरोधी सभा का आयोजन हुआ जिसमें महिलाओं ने बढ़ चढ़ कर भाग लिया। बिश्नी देवी शाह, दुर्गा देवी पंत, तुलसी देवी रावत, भक्ति देवी त्रिवेदी तथा अन्य महिला कार्यकर्ताओं ने इस सभा में भाग ले कर पर्वतीय अंचल की महिलाओं के भीतर सामूहिक राजनीतिक चेतना का बीजारोपण किया।[11] इन महिलाओं ने अदम्य साहस का परिचय देते हुए राष्ट्रीय आंदोलन व्यापक बनाने के लिए महिला संगठन का गठन किया तथा ब्रिटिश सैनिकों के भारी पहरे के बावजूद इन्होने राष्ट्रीय ध्वज फहराने का लक्ष्य सफलतापूर्वक पूरा किया।[12] इन साहसी महिलाओं ने ब्रिटिश शासन की दमनकारी और शोषणकारी नीतियों के खिलाफ़ आवाज उठाई और राष्ट्रवादी आंदोलन में सक्रिय सहयोग किया।

यह चरण केवल स्वतंत्रता आंदोलन में भागीदारी तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि राजनीतिक विकास क्रम को आगे बढ़ाते हुए जनवरी 1931 में उत्तराखण्ड की महिलाओं ने बागेश्वर में एक अत्यंत महत्वपूर्ण ऐतिहासिक सम्मेलन का

आयोजन किया। इस राजनीतिक मंच से न केवल स्त्रियों के सामाजिक उत्थान और राष्ट्रीय आंदोलन में उनकी सक्रिय भागीदारी की वकालत की गयी बल्कि ब्रिटिश नीतियों के खिलाफ़ एकजुट होकर संघर्ष करने और विदेशी कपड़ों की होली जलाने की राजनीतिक शपथ भी ली गई।[13] बागेश्वर जिले में जन्मी बिश्नी देवी शाह ने अल्पशिक्षित और बाल विधवा होने के बावजूद बहुत ही कम आयु में मंचों से ओजपूर्ण देशभक्ति के गीत गाकर जनमानस को जगाया तथा राजनीतिक नेतृत्व का एक नया उदाहरण पेश किया।[14] इसी राजनीतिक सक्रियता के कारण वर्ष 1930 में उन्हें गिरफ्तार कर अल्मोड़ा कारागार में डाल दिया गया। वहाँ उन्हें घोर यातनाएं और कष्टमयी जीवन बिताने को मजबूर होना पड़ा।[15] इसके अतिरिक्त इस चरण में लक्ष्मी देवी टम्टा जैसी शिक्षित और जागरूक महिलाओं की भी सक्रियता देखने को मिली। इन्होंने वर्ष 1935 में सूबे के सबसे पुराने साप्ताहिक समाचार पत्र 'समता' का सम्पादन किया और अपनी लेखनी के माध्यम से समाज के दलित वर्ग की दयनीय स्थिति तथा राजनीतिक-सामाजिक अधिकारों की ओर ध्यान आकर्षित किया।[16] अतः हम यह कह सकते हैं कि उत्तराखण्ड में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता का प्रथम चरण केवल औपचारिक व प्रतीकात्मक नहीं था बल्कि यह सामाजिक रूढ़ियों को तोड़कर पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर तथा जेलों की यातनाएं सहकर ब्रिटिश सत्ता की बन्दूकों के सामने खड़े होकर उन्होंने अपने राजनीतिक अस्तित्व को स्थापित करने का अभूतपूर्व प्रयास किया। यह एक अत्यंत गौरवशाली और क्रांतिकारी कालखंड था।

द्वितीय चरण: स्वतंत्रता के बाद सामाजिक एवं जन आंदोलनों का दौर

उत्तराखण्ड में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता का द्वितीय चरण स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सामाजिक, पर्यावरणीय तथा क्षेत्रीय आंदोलनों के माध्यम से आगे बढ़ा। यह कालखंड महिलाओं की राजनीतिक चेतना और सहभागिता का स्वर्णिम युग माना जाता है। इस काल में ही महिलाओं की राजनीतिक चेतना, संगठन क्षमता तथा नेतृत्व कौशल को विस्तार मिला। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान प्राप्त अनुभवों ने महिलाओं के अंदर यह आत्मविश्वास जगाया कि वो केवल परिवार और घरेलू जीवन तक ही सीमित नहीं हैं बल्कि सामाजिक परिवर्तन की सशक्त वाहक भी बन सकती हैं। विकास की प्रक्रिया में महिलाओं की स्थिति, जीवन स्तर, भूमिकाओं तथा दृष्टिकोण में अनेक विचारणीय परिवर्तन आए तथा महिलाओं ने अपने ऊपर लगाए गए अनेक प्रकार के प्रतिबंधों से मुक्त होकर आर्थिक समानता तथा सामाजिक स्वतंत्रता प्राप्त करने का प्रयास किया।[17] उत्तराखण्ड की विषम भौगोलिक परिस्थितियों में जल, जंगल और जमीन से महिलाओं का जीवन प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ था जो कि वर्तमान समय में भी लगभग वैसा ही है। ईंधन, चारा, पानी और कृषि सम्बन्धी जरूरतों को पूरा करने का उत्तरदायित्व उन पर ही था इसलिए प्राकृतिक संसाधनों पर संकट उत्पन्न होने पर सबसे पहले महिलाओं ने ही इसका विरोध किया। इस चरण का सबसे महत्वपूर्ण आंदोलन "चिपको आंदोलन" था। चिपको आंदोलन की शुरुआत मार्च 1974 में रेणी गाँव, चमोली से हुई थी यहाँ पर गौरा देवी के नेतृत्व में इक्कीस महिलाओं ने पेड़ों से चिपककर इन्हें कटने से बचाया। ठेकेदारों की धमकियों की परवाह न करते हुए इन्होंने यह घोषणा की कि "पहले हमें काटो, फिर पेड़ों को काटना"।[18] महिलाओं के इस शांतिपूर्ण प्रतिरोध ने इस आंदोलन को सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्धि दिलायी । इस आंदोलन ने यह सिद्ध किया कि प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा केवल आर्थिक प्रश्न नहीं है, बल्कि यह जीवन, आजीविका और सामाजिक अस्तित्व का भी प्रश्न है। इस साहसिक प्रतिकार ने न केवल वनों को कटने से बचाया, बल्कि सम्पूर्ण विश्व में पर्यावरण को लेकर एक नयी राजनीतिक चेतना का आरम्भ किया। इसी विचार धारा को आगे बढ़ाते हुए अविवाहित युवतियों ने 'मैती' आंदोलन के माध्यम से विवाह के शुभ अवसर पर नव-विवाहित दम्पत्तियों द्वारा पौधारोपण की परंपरा को विकसित किया।[19] उत्तराखण्ड की महिलाओं ने इस अभियान को व्यापक जन समर्थन दिया तथा पौधों को रोपने और उसे सींचने की एक भावनात्मक तथा रचनात्मक सांस्कृतिक प्रथा को भी जन्म दिया।

पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ सामाजिक अन्याय और सामाजिक बुराइयों के खिलाफ महिलाओं का नेतृत्व अभूतपूर्व रहा। पर्वतीय क्षेत्रों में तेजी से फैलते शराब के जहर और उसके कारण होने वाली घरेलू हिंसा तथा आर्थिक नुकसान के विरोध में महिलाओं ने मोर्चा संभाला। रेवती उनियाल, हेमा देवी, टिंचरी माई (दीपा देवी) जैसी साहसी महिलाओं के नेतृत्व में महिलाओं ने उग्र आंदोलन किया, शराब की दुकानें जलाईं और पुलिस व प्रशासन के कड़े पहरे

के बीच शराब की नीलामियाँ स्थगित करवाकर अपनी संगठनात्मक शक्ति का प्रदर्शन किया।[20] 1960 के दशक से लेकर 1980 और 1990 के दशकों तक यह आंदोलन भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में चलता रहा।[21] महिलाओं ने धरने, प्रदर्शन, बहिष्कार और जनजागरण अभियानों के माध्यम से सरकार पर अनुकूल दवाब बनाने का प्रयास किया।[22] इससे महिलाओं में संगठनात्मक शक्ति और राजनीतिक हस्तक्षेप की क्षमता का उल्लेखनीय विकास हुआ। इस दौरान उत्तराखण्ड संघर्ष वाहिनी द्वारा संचालित "नशा नहीं रोजगार दो" आंदोलन को भी महिलाओं ने एक प्रबल जन-आंदोलन में बदल दिया।[23] उत्तराखण्ड में 1971 में विश्वविद्यालय आंदोलन प्रारम्भ हुआ इसमें महिलाओं की सक्रिय सहभागिता महत्वपूर्ण रही। इस आंदोलन में उच्च शिक्षा के विस्तार और क्षेत्रीय विकास की माँग को लेकर चलाए गए आंदोलनों में छात्राओं, शिक्षिकाओं तथा सामाजिक कार्यकर्ता महिलाओं ने सक्रिय भागीदारी निभाई। उन्होंने शिक्षा को परिवर्तन और विकास का आधार मानते हुए आंदोलन को लोकप्रिय बनाया।[24] इस प्रक्रिया ने महिलाओं को बौद्धिक नेतृत्व और सार्वजनिक विमर्श में सक्रिय भागीदारी का अवसर दिया।

द्वितीय चरण का सबसे व्यापक और प्रभावशाली आंदोलन पृथक उत्तराखण्ड राज्य आंदोलन था। इसमें महिलाओं के संगठनात्मक कौशल, अदम्य संघर्षशीलता और प्रखर राजनीतिक जागरूकता को नयी पहचान मिली। यह आंदोलन किसी राजनीतिक दल अथवा विचारधारा से प्रेरित नहीं था बल्कि यह विशुद्ध रूप से पर्वतीय मातृशक्ति की भावनाओं और पहाड़ों की बुनियादी विकास की आकांक्षाओं का नतीजा था।[25] 1994 में अपने सभी घरेलू कामकाज छोड़कर उत्तराखण्ड की महिलायें बहुत बड़ी संख्या में सड़कों पर उतर गईं।[26] इस दौरान घटित मुजफ्फरनगर कांड जैसे घृणित सरकारी दमन और अत्याचारों का सामना करते हुए हंसा धनाई और बेलमती चौहान जैसी साहसी महिलाओं ने अपने प्राणों की आहुति दी।[27] इसी आंदोलन से कौशल्या डबराल, सुशीला बलूनी, द्वारिका बिष्ट, कमला पंत, धनेश्वरी देवी जैसी महिला नेताओं का उदय हुआ। जिन्होंने नेतृत्वविहीन समझे जाने वाले इस आंदोलन को एक स्पष्ट राजनीतिक सोच तथा उचित दिशा प्रदान की।[28] अंततः यह स्पष्ट है कि उत्तराखण्ड के निर्माण में पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं ने भी अत्यंत सक्रिय भूमिका निभाई। 09 नवंबर, 2000 को पृथक पर्वतीय राज्य उत्तरांचल (उत्तराखण्ड) का सृजन हुआ।[29]

तृतीय चरण : राज्य गठन के बाद महिलाओं की राजनीतिक सशक्तिकरण का संस्थागत विकास

उत्तराखण्ड राज्य के गठन के बाद महिलाओं ने राजनीतिक सहभागिता के नए चरण में प्रवेश किया। इस चरण की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि पंचायती राज्य संस्थाओं तथा स्थानीय स्वशासन में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी रही। उत्तराखण्ड सरकार ने पंचायती राज व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए 73 वें संविधान संशोधन को लागू किया जिसके द्वारा पंचायतों में 50% आरक्षण नीति से उत्तराखण्ड में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी को संस्थागत आधार प्रदान किया।[30] शुरुआती वर्षों 2001-2010 में महिलाओं की भागीदारी मुख्यतया आरक्षित सीटों तक ही सीमित थी, इस समय पर अनेक स्थानों पर 'प्रधान-पति' अथवा 'प्रॉक्सी' (proxy) राजनीति की प्रवृत्ति दिखाई देती थी।[31] यहाँ पर निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों के स्थान पर अधिकांशतः उनके पति या परिवार के अन्य पुरुष सदस्य वास्तविक निर्णय लेते थे। इसी अवधि में पहली बार ग्रामीण महिलाओं ने औपचारिक राजनीतिक प्रक्रियाओं में प्रवेश किया। वर्ष 2011-2020 की अवधि में महिलाओं की राजनीतिक स्थिति में गुणात्मक परिवर्तन दिखाई देने लगे। शिक्षा के प्रसार, स्वयं सहायता समूह (SHGs), महिला मंडलों, सरकारी योजनाओं तथा ग्रामीण जागरूकता अभियानों ने महिलाओं के आत्मविश्वास को और अधिक मजबूत किया।[32] अब वे केवल चुनाव लड़ने तक सीमित नहीं रहीं, बल्कि पंचायतों में सक्रिय निर्णयकर्ता के रूप में सामने आईं। उन्होंने स्वास्थ्य, स्वच्छता, पोषण, पेयजल, शिक्षा-सुधार, महिला सुरक्षा और शराबबंदी जैसे मुद्दों को वरीयता दी। महिलाओं की राजनीति में संवेदनशीलता और सामुदायिक दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से दिखाई दिया। उनकी राजनीति का स्वरूप सत्ता केंद्रित न होकर विकास केंद्रित बनने लगा।

2025 के पंचायती चुनावों में उत्तराखण्ड की महिलाओं ने राजनीतिक भागीदारी का अत्यंत बेहतर प्रदर्शन किया। राज्य निर्वाचन आयोग के अनुसार कुल 63,569 उम्मीदवारों में से 37,356 महिलायें थीं, अर्थात यह आँकड़ा कुल नामांकन का लगभग 59% था जो आरक्षण की निर्धारित सीमा से भी अधिक है।[33] इन चुनावों के पश्चात ग्राम पंचायत

सदस्य पद पर महिलाओं की भागीदारी 62.5%, ग्राम प्रधान पद पर 57.1% तथा क्षेत्र पंचायत सदस्य पद पर 54.2% रही।[34] यह आँकड़ा केवल संख्यात्मक वृद्धि ही नहीं दिखाता बल्कि यह भी दर्शाता है कि ग्रामीण क्षेत्र में महिला नेतृत्व की स्वीकृति न सिर्फ बढ़ी है बल्कि इसे व्यापक जन स्वीकृति भी मिली है। इससे यह भी निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अब जनता राजनीति के क्षेत्र को केवल पुरुषों का क्षेत्र नहीं मानती।

इन आंकड़ों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि उत्तराखण्ड में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी को बढ़ाने के लिए केवल आरक्षण ही पर्याप्त नहीं है बल्कि सामाजिक संरचना और आर्थिक परिस्थितियों का विकसित होना भी अत्यंत आवश्यक है। पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका की तलाश में पुरुषों के पलायन के कारण महिलाओं की कठोर जिम्मेदारियों से जूझने की प्रवृति ने भी महिलाओं को सामाजिक-राजनीतिक नेतृत्व के क्षेत्र में परिपक्व करने के साथ-साथ इसे आगे भी बढ़ाया है। पर्वतीय पारिस्थतिकी तथा सामाजिक व्यवस्था के कारण महिलायें गाँव की अर्थव्यवस्था, कृषि, जल-जंगल संरक्षण और परिवार की जिम्मेदारियों को पूर्ण करने वाली मुख्य उत्तरदायी बन गईं हैं । इसके परिणामस्वरूप इनकी स्थानीय समस्याओं की समझ और उनके समाधान की क्षमता और अधिक विकसित हुई है । स्थानीय स्तर की राजनीति में यही अनुभव उनके नेतृत्व की शक्ति बनी।

इसके विपरीत विधानसभा के चुनावों में महिलाओं की स्थिति अपेक्षाकृत कमजोर दिखाई देती है। 2002 से 2022 तक के विधान सभा के चुनावों में महिला प्रत्याशियों की संख्या में वृद्धि तो अवश्य हुई है किन्तु यह वृद्धि पंचायतों की तुलना में बहुत सीमित रही है ।[35] 2002 में लगभग 35 से 40 महिला प्रत्याशियों ने ही भागीदारी की जबकि 2022 तक तह संख्या लगभग 70 से अधिक पहुंच गई ।[36] चुनाव जीतने वाली महिलाओं की संख्या भी धीरे-धीरे बढ़कर 8 तक तो पहुंची लेकिन कुल 70 सीटों वाली विधानसभा में यह प्रतिनिधित्व अत्यंत कम है। इसके कुछ मुख्य संभावित कारण हैं जैसे राजनीतिक दलों द्वारा महिलाओं को सीमित टिकट देना, चुनावी खर्चे का अत्यधिक होना, संगठनात्मक समर्थन की कमी, तथा पित्र-सत्तात्मक राजनीतिक संरचना इत्यादि हैं।

समग्र रूप से देखा जाए तो 2001 से 2025 तक उत्तराखण्ड में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी ने एक महत्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन प्रारंभ किया है। उन्होंने राजनीतिक मुद्दों को बदलने का प्रयास किया। पुरुष प्रधान राजनीति प्रायः दलगत प्रतिस्पर्धा, व्यक्तिगत प्रभाव तथा सत्ता केंद्रित रही है जबकि महिलाओं की प्राथमिकता प्रायः विकास, स्वास्थ्य, शिक्षा, पोषण, सामाजिक कल्याण जैसे मुद्दे होते हैं । फिर भी अनेकों चुनौतियाँ अभी भी बनी हुई हैं प्रॉक्सी (Proxy) राजनीति पूरी तरह से समाप्त नहीं हुई है। यहाँ पर प्रॉक्सी राजनीति से तात्पर्य यह है कि ऐसी प्रणाली जिसमें प्रभावशाली व्यक्ति महिला उम्मीदवारों को चुनाव लड़वा कर तथा उन्हें जितवा कर वास्तविक निर्णय लेने की शक्ति को अपने हाथों में रखते हैं। इसके अतिरिक्त कई अन्य कारण जैसे - आर्थिक निर्भरता, प्रशासनिक अनुभव की कमी, सीमित राजनीतिक प्रशिक्षण तथा सामाजिक दवाब आदि भी महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता को प्रभावित करते हैं। उत्तराखण्ड का अनुभव यह स्पष्ट करता है कि जब महिलाओं को पर्याप्त अवसर, सामाजिक समर्थन और राजनीतिक मंच मिलता है तो वे लोकतंत्र को अधिक उत्तरदायी, समावेशी और जनकल्याणकारी बनाती हैं।

महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता के परिणामस्वरूप उत्तराखण्ड में सामाजिक परिवर्तन:

परम्परागत समाजों में महिलाओं का सदैव शोषण होने की मान्यता रही है, किन्तु सामाजिक परिवर्तन ने उनकी भूमिका को पुनर्परिभाषित किया है।[37] परिवार की बढ़ती आवश्यकताओं और आर्थिक दबावों के कारण महिलाओं को घर और बाहर दोनों क्षेत्रों में दोहरी भूमिका निभानी पड़ती है।[38] इस कारण सापेक्ष अभावबोध की भावना व्यक्ति को सामाजिक परिवर्तन तथा नये लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रेरित करती है।[39] समय के साथ अनेक परिवर्तनों जैसे शिक्षा, आधुनिकीकरण और आर्थिक अवसरों ने महिलाओं की पारम्परिक भूमिका को परिवर्तित कर उन्हें सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक जीवन में सक्रिय सहभागिता के लिए सक्षम बनाया है।[40] उत्तराखण्ड में भी महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता ने समाज में व्यापक सामाजिक परिवर्तन की नींव रखी है। वे केवल घर परिवार तक सीमित नहीं हैं बल्कि स्वतंत्रता आंदोलन से लेकर चिपको आंदोलन, मद्य निषेध आंदोलन, उत्तराखण्ड राज्य आंदोलन तथा पंचायती राज संस्थाओं में बढ़ती भागीदारी तक महिलाओं ने सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को निरंतर गति प्रदान की है। इस

परिवर्तन ने महिलाओं के प्रति समाज की पारंपरिक धारणाओं को बदला और यह स्थापित किया कि महिलाएँ भी नेतृत्व, संगठन और निर्णय लेने की क्षमता रखती हैं।

महिलाओं की राजनीति में सक्रिय भागीदारी के कारण उत्तराखण्ड में लैंगिक समानता और महिला सशक्तीकरण को बल मिला है। उत्तराखण्ड की महिलाओं ने राजनीतिक दाँव–पेच किसी राजनीतिक दल के कार्यालय में नहीं सीखे बल्कि, अपने हकों की लड़ाई लड़ते हुए सड़कों और जंगलों में सीखे । हमेशा से उन्होंने राज्य की विभिन्न समस्याओं के निराकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । पंचायतों और स्थानीय शासन में महिलाओं के प्रतिनिधित्व ने लड़कियों की शिक्षा, महिला स्वास्थ्य, स्वच्छता, पोषण तथा महिला अधिकारों जैसे मुद्दों को प्रमुखता दिलाई। इसका परिणाम यह हुआ कि महिलाओं में आत्मविश्वास, जागरूकता और सार्वजनिक जीवन में भागीदारी की प्रवृत्ति बढ़ी है। यही कारण है कि आज ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाएँ भी अपने अधिकारों, सरकारी योजनाओं और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के प्रति पहले की अपेक्षा अधिक जागरूक दिखाई देती हैं।

महिला नेतृत्व ने पर्यावरण संरक्षण, चेतना और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण को एक नई दिशा प्रदान की। चिपको आंदोलन, मैती तथा अन्य विभिन्न आंदोलनों के माध्यम से महिलाओं ने जल, जंगल और जमीन के संरक्षण को जनआंदोलन का रूप दिया। इन आंदोलनों ने समाज में पर्यावरण संरक्षण के प्रति संवेदनशीलता बढ़ाई तथा विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता को चिन्हित किया। इसका परिणाम यह हुआ कि उत्तराखण्ड में पर्यावरणीय मुद्दे केवल सरकारी नीतियों तक सीमित न रहकर जनसामान्य की चिंता का विषय बन गए।

पर्वतीय क्षेत्र के पुरुष वर्ग में मद्य-पान एक विकट सामाजिक समस्या रही है। मद्य निषेध आंदोलन जैसे प्रयासों ने सामाजिक बुराइयों के विरुद्ध जनता को जागरूक किया हैं। महिलाओं ने शराबखोरी, घरेलू हिंसा और पारिवारिक शोषण के विरुद्ध संगठित संघर्ष किया, जिसके माध्यम से सामाजिक उत्तरदायित्व और सामुदायिक एकजुटता की भावना विकसित हुई। इन आंदोलनों ने महिलाओं को केवल सामाजिक कार्यकर्ता नहीं, बल्कि परिवर्तनकारी नेतृत्वकर्ता के रूप में स्थापित किया। इसके साथ ही महिलाओं की बढ़ती राजनीतिक जागरूकता तथा भूमिका ने परिवार और समाज में उनके निर्णयों को विशेष स्थान दिलाया तथा पारिवार में भी उनकी स्थिति को मजबूत किया।

उत्तराखण्ड राज्य आंदोलन ने महिला सशक्तिकरण को और अधिक मजबूत किया, उनकी व्यापक भागीदारी ने क्षेत्रीय पहचान, लोकतांत्रिक चेतना और नागरिक सहभागिता को सुदृढ़ किया। महिलाओं ने राज्य निर्माण की मांग को विकास, शिक्षा, रोजगार और सामाजिक न्याय जैसे मुद्दों से जोड़ा। इससे समाज में लोकतांत्रिक अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी और उत्तराखण्ड का प्रत्येक नागरिक, विशेषकर महिलाओं, को सार्वजनिक नीतियों और शासन प्रक्रियाओं में अपनी भूमिका का बोध हुआ।

निष्कर्षतः उत्तराखण्ड में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता ने न केवल राजनीतिक क्षेत्र को प्रभावित किया, बल्कि सामाजिक विकास के प्रत्येक क्षेत्र जैसे सामाजिक संरचना, लैंगिक संबंधों, पर्यावरणीय दृष्टिकोण, लोकतांत्रिक चेतना और विकास की अवधारणाओं में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन किए हैं। महिलाओं का नेतृत्व सामाजिक परिवर्तन का एक सशक्त माध्यम बनकर उभरा है, जिसने उत्तराखण्ड के समाज को अधिक जागरूक, सहभागी, समानतापूर्ण और प्रगतिशील बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

उपसंहार

उत्तराखण्ड में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता का विकास एक लंबी ऐतिहासिक, सामाजिक और राजनीतिक प्रक्रिया का परिणाम है। यह प्रक्रिया स्वतंत्रता आंदोलन से प्रारंभ होकर विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक, पर्यावरण संरक्षण, पृथक उत्तराखण्ड राज्य आंदोलन तथा समकालीन पंचायती राज संस्थाओं के विकास तक निरंतर बढ़ती रही। समय-समय पर महिलाओं ने निरंतर अपनी उपस्थिति और नेतृत्व क्षमता का परिचय दिया है, इन आंदोलनों ने महिलाओं में राजनीतिक चेतना, संगठनात्मक कौशल, आत्मविश्वास और निर्णय लेने की क्षमता का विकास किया तथा उन्हें समय के साथ सामाजिक परिवर्तन की महत्वपूर्ण वाहक के रूप में स्थापित किया।

राज्य गठन के पश्चात पंचायती राज संस्थाओं में 50 प्रतिशत आरक्षण ने महिलाओं को राजनीतिक रूप से सशक्त किया, जिससे स्थानीय शासन और विकास प्रक्रियाओं में उनकी भागीदारी बढ़ी। इसके बावजूद पितृसत्तात्मक मानसिकता, अशिक्षा, आर्थिक निर्भरता, निर्बल सामाजिक स्थिति, राजनीतिक दलों द्वारा सीमित अवसर तथा 'प्रधान पति' जैसी प्रवृत्तियाँ आज भी महिलाओं के वास्तविक राजनीतिक सशक्तीकरण में बाधा उत्पन्न करती हैं।

अतः यह कहा जा सकता है कि उत्तराखण्ड में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता केवल राजनीतिक प्रतिनिधित्व का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन, लैंगिक समानता और लोकतांत्रिक विकास से जुड़ी एक व्यापक प्रक्रिया है। महिलाओं के वास्तविक सशक्तीकरण के लिए आवश्यक है कि उन्हें गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, राजनीतिक प्रशिक्षण, नेतृत्व विकास तथा स्वतंत्र निर्णय लेने के समान अवसर प्रदान किए जाएँ। तभी महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता मात्र संख्यात्मक उपलब्धि न रहकर गुणात्मक और प्रभावी नेतृत्व में परिवर्तित हो सकेगी तथा समावेशी और लोकतांत्रिक समाज के निर्माण में सार्थक योगदान दे सकेगी।

सन्दर्भः

[1] गोयल, रश्मि. (2019). *ग्रामीण महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता (उत्तराखण्ड के द्वारा हाट ब्लॉक की अनुसूचित जातियों के विशेष सन्दर्भ में)*. नैनीताल: कुमाऊँ विश्वविद्यालय, पीएच०डी० शोध प्रबन्ध.

[2] पाण्डे, प्रियंका. (2024). उत्तराखण्ड में महिलाओं की स्थिति. *IJCRT*, vol. 12, issue 3.

[3] रौतेला, बसन्ती. उत्तराखण्ड में ग्रामीण स्त्री जीवन का वास्तविक स्वरूप. *Journal of Acharaya Narendra Dev Research Institute*.

[4] वही.

[5] पाण्डे, प्रियंका. (2024). उत्तराखण्ड में महिलाओं की स्थिति. *IJCRT*, vol. 12, issue 3.

[6] Chauhan, Rajkumari Bhandari. (2019). महिला आंदोलनों का इतिहास: पर्वतीय राज्य उत्तराखंड के विशेष संदर्भ में. *IOSR Journal of Humanities and Social Science (IOSR-JHSS)*, vol. 24, no. 10, ser. 9, pp. 10–13.

[7] वही.

[8] डबराल, शिव प्रसाद. *उत्तराखंड का इतिहास*. वीरगाथा प्रकाशन, संविधान खंड, 1965-1998.

[9] लखेड़ा प्रवीण. (2026). *साम्राज्यवाद और इसके प्रभाव: उत्तराखण्ड राज्य के विशेष संदर्भ में एक ऐतिहासिक अध्ययन,* 1815-1947.

[10] चौहान, राजकुमारी. (2021). *उत्तराखण्ड महिला भूमिका का इतिहास*. समय साक्ष्य.

[11] वही.

[12] वही.

[13] Dhasmana, Y. S. (2005). *Uttarakhand Andolan ka Itihas*. Winsar Publishing Company.

[14] वही.

[15] Chauhan, Rajkumari Bhandari**.** (2019). महिला आंदोलनों का इतिहास: पर्वतीय राज्य उत्तराखंड के विशेष संदर्भ में. *IOSR Journal of Humanities and Social Science (IOSR-JHSS)*, vol. 24, no. 10, ser. 9, pp. 10–13.

[16] वही.

[17] प्रकाश, रेनू. (2001). *कार्यरत महिलायें : सापेक्ष अभावबोध, भूमिका संघर्ष एवं शोषण (नगरीय कुमाऊँ में शासकीय कार्यालयों में विभिन्न श्रेणियों में कार्यरत महिलाओं का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन)*. पीएच.डी. शोध प्रबंध, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल.

[18] Pathak, Shekhar. (2020). *Chipko Movement: A People's History*. Permanent Black.

[19] Dhasmana, Y. S. (2005). *Uttarakhand Andolan ka Itihas*. Winsar Publishing Company.

[20] वही.

[21] Chauhan, Rajkumari Bhandari**.** (2019). महिला आंदोलनों का इतिहास: पर्वतीय राज्य उत्तराखंड के विशेष संदर्भ में. *IOSR Journal of Humanities and Social Science (IOSR-JHSS)*, vol. 24, no. 10, ser. 9, pp. 10–13.

[22] वही.

[23] वही.

[24] वही.

[25] वही.

[26] Guha, Ramachandra. (2000). *The Unquiet Woods: Ecological Change and Peasant Resistance in the Himalaya*. Oxford University Press.

[27] वही.

[28] वही.

[29] वही.

[30] Mathew, George. (2000). *Status of Panchayati Raj in the States and Union Territories of India*. Concept Publishing Company.

[31] Vijay, Sangeeta, & Aradhana Sharma**.** Political Empowerment of Women at Grassroot level: An Empirical Study of Women Sarpanch in Dehradun, Uttarakhand. *Innovations*. no. 82, Sept. 2025, pp. 280-294.

[32] Rural Development in Uttarakhand Concerning Women. *Journal of Information Systems Engineering and Management*, 2025

[33] Women Candidates Make Big Impact, Figure Reaches 59 Percent in Uttarakhand Panchayat Elections. *Amar Ujala*, 9 July 2025, Amar Ujala Uttarakhand Panchayat Elections Report

[34] वही.

[35] Total Women Candidates: Uttarakhand 2022 Election. *Association for Democratic Reforms (ADR)*, ADR Uttarakhand Women Candidates Data

[36] Election Year and Constituency-wise Women Candidates in Uttarakhand. *Dataful*, Dataful Election Dataset

[37] प्रकाश, रेनू. (2001). *कार्यरत महिलायें : सापेक्ष अभावबोध, भूमिका संघर्ष एवं शोषण (नगरीय कुमाऊँ में शासकीय कार्यालयों में विभिन्न श्रेणियों में कार्यरत महिलाओं का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन)*. पीएच.डी. शोध प्रबंध, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल.

[38] वही.

[39] वही.

[40] वही.